डॉ॰ बुद्धदेव प्रसाद सिंह
सहायक प्राचार्य (asst. prof.),
हिन्दी विभाग,
डी.बी. कॉलेज जयनगर

पाठ्य सामग्री,
स्नातक हिन्दी प्रतिष्ठा, प्रथम वर्ष, द्वितीय पत्र के लिए।

दिनांक- 08.05.2020
(व्याख्यान संख्या- 20)

* सप्रसंग व्याख्या

मूल अवतरण:-

"सुरति समानी निरति में...
.... अजपा माहीं जाप"।

प्रस्तुत पद्यावतरण ज्ञानमार्गी निर्गुण धारा के सर्वश्रेष्ठ कवि कबीर द्वारा रचित है। यह साखी हमारी पाठ्यपुस्तक पुस्तक 'कबीर वचनावली' में 'परिचय' शीर्षक के अंतर्गत संकलित है।

प्रस्तुत साखी में संत कवि कबीर का कहना है कि 'सुरति' (अर्थात् स्मृति) 'निरति' (अर्थात् तल्लीनता) में समा गयी, अजपा में जाप समा गया, लक्षित अलक्षित में समा गया, इसी प्रकार आत्म-तत्त्व आत्मतत्त्व में समा गया।

यहाँ कवि कबीर के कहने का भाव यह है कि साधना पथ पर अग्रसर होते हुए ऐसी स्थिति आ गयी कि सुरति अर्थात् बहिर्मुखी वृत्ति या चित्त वृत्तियों का प्रवाह अंतर्मुखी हो गया। प्रियतम की स्मृति प्रियतम में ही समाहित हो गयी। शब्दोन्मुख चित्त शब्दमय हो गया। आत्मा पूर्ण तन्मयता की स्थिति में पहुँच गयी। मन पूर्ण वैराग्य की स्थिति या नैरात्म्य को प्राप्त हो गया। ऐसी अवस्था में जप-तप की जरूरत नहीं होती। बिना जप के ही जप की क्रिया संपन्न होने लगती है। श्वास- प्रश्वास से स्वेतः ओ३म् या राम का शब्द निकलने लगता है। साकार, सीमित तथा प्रत्यक्ष तत्त्वबद्ध-जीव निराकार, असीमित, अप्रत्यक्ष ब्रह्म में लीन हो जाता है। अहंकारयुक्त आत्मा विशुद्ध आत्मा में समाहित हो जाती है। कबीर के परिचय का यही वास्तविक स्वरूप है।

पारिभाषिक शब्दों का गंभीर विन्यास तथा अनुभूति की गहनता के कारण यह साखी सामान्य बोध

की सीमा से परे हो गयी है। कबीर ने भक्ति, ज्ञान तथा योग तीनों को एक साथ समन्वित करने का यत्न किया है, जिससे पारिभाषिक शब्दों का भी पर्याप्त अर्थ विस्तार हो गया है।